IJAER/ March-April 2024/Volume-13/Issue-2 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research
(Peer-Reviewed, Open Access, Fully Refereed International Journal) Impact Factor:7.06

वर्तमान शिक्षा के प्ररिप्रेक्ष्य में वैदिक कालीन शिक्षा दर्शन एवं स्वामी रामदेव जी के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन

➢ ओमपाल सिंह, शोधकर्ता, ग्लोकल स्कूल ऑफ एजुकेशन, द ग्लोकल यूनिवर्सिटी, मिर्जापुर पोल, सहारनपुर (उत्तर प्रदेश)
➢ डॉ0 गुरप्रीत सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर एवं शोध निर्देशक, ग्लोकल स्कूल ऑफ एजुकेशन, द ग्लोकल यूनिवर्सिटी, मिर्जापुर पोल, सहारनपुर (उत्तर प्रदेश)

सार–
वर्तमान शिक्षा के प्ररिप्रेक्ष्य में वैदिक कालीन शिक्षा दर्शन तथा स्वामी रामदेव के शैक्षिक विचारों का किस सीमा तक प्रयोग किया जा सकता है और हमारी शैक्षिक समस्याओं का कहाँ तक निराकरण किया जा सकता है। आधुनिक समय मे विषयों का चुनाव करते समय छात्रों को स्वयं गुरुजनों से मार्गदर्शन उपलब्ध नहीं हो पाता है। अतएव वे अपनी रुचि, मानसिकता और क्षमता का ध्यान रखे बिना विषयों का निर्वाचन कर लेते हैं। इसके परिणाम स्वरूप वे अध्ययनीय विषयों में विशेष दक्षता नहीं प्राप्त कर पाते हैं और उन्हें जीवन में केवल असफलता ही प्राप्त होती है तथा वे समाजिक समस्याओं से संघर्ष करने में कतराने लगते हैं। लेकिन प्राचीन समय में छात्रों को अपने भावी जीवन में आज जैसी स्थिति का सामना नहीं करना पड़ता था। अतः आज भी यह आवश्यक है कि प्राचीन समयकी भाँति ही आज भी शिक्षण संस्थाओं में कार्यरत् अध्यापक छात्रों को विषयों के चुनाव में उचित मार्गदर्शन करें जिससे वे भावी समस्याओं को हल करने योग्य बना सकें।

प्रस्तावना

भारतीय शिक्षा का इतिहास बहुत विस्तृत एवं व्यापक है। प्राचीन समय से लेकर वर्तमान समय तक भारतीय समाज का स्वरूप एवं आवश्यकतायें परिवर्तित होती रही हैं। इस परिवर्तन के साथ ही शिक्षा–प्रणाली में परिवर्तन आया है। इस कथन को ध्यान में रखकर भारतीय इतिहास को प्राचीन, मध्य तथा आधुनिक काल में विभक्त किया गया है। शिक्षा समाज का गतिशील अंग है। समाज के गतिशील होने के कारण उनकी आवश्यकतायें परिवर्तित होती रहती हैं। इन्हीं की पूर्ति के निमित्त शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। समाज का स्वरूप देश और काल की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। देश विरोध की सामाजिक आवश्यकताओं एवं मान्यतायें अन्य देश से भिन्न होती है, अतएव शिक्षा के स्वरूप में भी भिन्नता आ जाती है। काल के आधार पर देश की आवश्यकताओं में परिवर्तन होने के कारण उसकी सामाजिक संरचना में परिवर्तन हो सकता है। इसका कारण देश–विदेश के एक युग में ही शिक्षा का स्वरूप एवं आकार दूसरे तरह का हो सकता है और दूसरे काल में दूसरे तरह का।

अतीत, वर्तमान और भविष्य समाज के अनवरत प्रवाह पर घटनाओं को निश्चित करने की विधि मात्र है। इतिहास के द्रष्टव्य परिवर्तनों एवं नवीनताओं में अन्तर देखना अत्यावश्यक हो जाता है। ऐसी ही स्थिति में वर्तमान का ठीक–ठीक मूल्यांकन किया जा सकता है।

प्राचीन युग में स्पष्टतः वैदिक काल का प्रारम्भ से लेकर 600 ई0 पू0 तक एक विशेष प्रकार की शिक्षा व्यवस्था रही। उस शिक्षा का तत्कालीन प्रभाव था कि समाज में शिक्षा प्रक्रिया में न्यूनतम कुरीतियां थी। परन्तु आज ऐसा लगता है कि हमारी शिक्षा व्यवस्था में कहीं गम्भीर त्रुटि है। वर्तमान समाज में व्याप्त शिक्षा सम्बन्धी कुरीतियों को दूर करने हेतु हमारे पास कोई मार्ग ही नहीं बचा है सिवाय प्राचीन ऋषि मुनियों द्वारा

बताये गये मार्गों एवं सिद्धान्तों के अनुकरण करने के। उसी प्राचीन परम्परा के एक दर्शन को स्वामी रामदेव ने नवीन कलेवर प्रदान करते हुए जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया है जिसके फलस्वरूप जनता उनकी तरफ स्वाभाविक रूप से खिचती चली आ रही है। स्वामी रामदेव जी ने अपने अनवरत प्रयासों, अकाट्य तर्को एवं प्राचीन भारतीय दर्शन की सरल एवं वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत कर जन–साधारण से सीधे, सहज सम्बन्ध स्थापित कर उसे प्राचीन भारतीय शिक्षा की ओर वापस मोड़ दिया है।

भारत योगियों का देश रहा है, वेदों तथा उपनिषदों में तथा अन्य सभी प्रमुख दर्शनों में जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए योग को अति आवश्यक माना जाता है। महर्षि पतंजलि से अरविन्द तक भारत में योग सम्बन्धी अनेकों प्रयोग हुए हैं। वर्तमान में स्वामी रामदेव प्राचीन योगदर्शन के नवीन प्रणेता हैं।

वर्तमान शिक्षा के प्ररिप्रेक्ष्य में वैदिक कालीन शिक्षा दर्शन तथा स्वामी रामदेव के शैक्षिक विचारों का किस सीमा तक प्रयोग किया जा सकता है और हमारी शैक्षिक समस्याओं का कहाँ तक निराकरण किया जा सकता है। आधुनिक समय मे विषयों का चुनाव करते समय छात्रों को स्वयं गुरुजनों से मार्गदर्शन उपलब्ध नहीं हो पाता है। अतएव वे अपनी रुचि, मानसिकता और क्षमता का ध्यान रखे बिना विषयों का निर्वाचन कर लेते हैं। इसके परिणाम स्वरूप वे अध्ययनीय विषयों में विशेष दक्षता नहीं प्राप्त कर पाते हैं और उन्हें जीवन में केवल असफलता ही प्राप्त होती है तथा वे समाजिक समस्याओं से संघर्ष करने में कतराने लगते हैं। लेकिन प्राचीन समय में छात्रों को अपने भावी जीवन में आज जैसी स्थिति का सामना नहीं करना पड़ता था। अतः आज भी यह आवश्यक है कि प्राचीन समयकी भाँति ही आज भी शिक्षण संस्थाओं में कार्यरत् अध्यापक छात्रों को विषयों के चुनाव में उचित मार्गदर्शन करें जिससे वे भावी समस्याओं को हल करने योग्य बना सकें।

वैदिक कालीन शिक्षा हमारी प्राचीनतम संस्कृति है। प्राचीन भारत की यह विशेषता रही कि इसका निर्माण राजनीतिक, आर्थिक अथवा सामाजिक क्षेत्र में न होकर धार्मिक क्षेत्र में हुआ। भारतीय संस्कृति धर्म की भावनाओं से ओत–प्रोत है। हमारे पूर्वजों ने जीवन को एक व्यापक दृष्टिकोण से देखा। **''वसुधैव–कुटुम्बकम''** ही उनका आदर्श था। **''सर्व भूत हितेरतः''** उनका कर्तव्य था। शिक्षा द्वारा व्यक्ति धर्म के मार्ग पर चलकर मोक्ष की प्राप्ति करता था। मोक्ष प्राप्त करना ही जीवन का उद्येश्य था। इसी दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा के अर्थ तथा उद्येश्य निर्धारित हुए।

आज विश्व की जनसंख्या दिन प्रतिदिन तेजी से बढ़ रही है जिसके पहले जीवन काफी जटिल, यांत्रिक और तकनीकी पूर्ण हो चुका है। आज प्रत्येक पुरुष और स्त्री की मांग है कि वह तकनीकी रूप से दक्ष, सक्षम तथा सृजनात्मक भूमिका से परिपूर्ण हों। प्रत्येक व्यक्ति के पास कुछ व्यावसायिक अभिक्षमता है जिसके लिए उसे काफी वैयक्तिकता के अनुरूप व्यवसाय की जरूरत है तथा साथी ही उस व्यावसाय या कार्य की अपनी कर्तव्य निष्ठा की भी इसके लिए स्वामी रामदेव का अभ्यास व क्रिया सम्बन्धी उपदेश अति प्रसांगिक है।

स्वामी रामदेव के अनुसार शिक्षा योग के द्वारा शारिरिक व अध्यात्मिक विकास की प्रक्रिया है। रामदेव जी के अनुसार शिक्षा संसार का वस्तुनिष्ठ ज्ञान, आत्मज्ञान, आत्म दर्शन और भौतिक सत्य प्राप्त करने का साधन है। उसके लिए स्वामी रामदेव छात्रों को अष्टांगिक योग मार्ग, आसन व प्राणायाम पर विशेष बल देते हैं।

स्वामी रामदेव जी ने वैदिक कालीन शिक्षा सम्प्रत्य को विस्तार दिया है, सम्पूर्ण बनाया है।

वैदिक काल व स्वामी रामदेव दोनों ने ईश्वर शक्ति तथा धार्मिक भावना, चरित्र निर्माण मोक्ष की प्राप्ति, चारित्रिक विकास तथा राष्ट्रीय चेतना का विकास करना को अपने मुख्य उद्देश्य माना है। यहाँ दोनों उद्देश्यों को **''वैज्ञानिक दृष्टिकोण व विश्लेषणात्मक बुद्धि का विकास करना''** शिक्षा की प्रक्रिया में सम्मिलित किया।

वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था समस्याओं के दौर से गुजर रही है। प्राचीन शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत भी कतिपय ऐसी ही समस्याएँ रही होंगी। परन्तु ,हमारे तत्कालीन आचार्यों ने अपने ज्ञान, अनुभव तथा प्रशासनिक क्षमता के द्वारा विभिन्न शैक्षिक समस्याओं का निराकरण एवं उन्मूलन करते हुए सुदृढ़ शिक्षा संगठन एवं परम्पराओं को विकसित किया। हमारे लिये यह आवश्यक है कि हम वैदिक शिक्षा दर्शन एवं विधियों का अध्ययन करें तथा यह जानने का प्रयास करे कि वर्तमान शिक्षा सम्बन्धी कठिनाइयों एवं समस्याओं को हल करने में वैदिक शिक्षा दर्शन किस सीमा तक सहायक सिद्ध हो सकती है।

आज ऐसा लगता है हमारी शिक्षा में कहीं गम्भीर त्रुटि है। भारतवर्ष की पवित्र भूमि सदियों से अपनी अध्यात्मिक विशिष्टता एवं ऊर्जा के लिये विश्व विख्यात है। यहां पर समय–समय पर अनेक ऋषि–मुनियों ने यथा वेदव्यास, आदि शंकराचार्य, स्वामी विवेकानन्द,स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा महर्षि अरविन्द आदि ने अपने जीवन, अपने आचरण, अपने विचारों एवं कार्यों से समूची मानवता तथा शिक्षा को समपोषित एवं आलोकित कर उसे सही दिशा देने का महान् कार्य सम्पन्न किया है। उसी ऋषि परम्परा की कड़ी में एक नया नाम है–स्वामी रामदेव।

वैदिक कालीन शैक्षिक विचार

वैदिक कालीन शैक्षिक विचारों को निम्नलिखित शिर्षकों के अन्तर्गत रखा गया है–

वैदिक काल के अनुसार शिक्षा का तात्पर्य

''सा विद्या या विमुक्तये'' उक्त कथन द्वारा शिक्षा को मोक्ष प्राप्त करने का साधन व प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया है। वैदिक समाज के प्रारम्भिक चरण में शिक्षा का स्वरूप अत्यन्त न्यून था। ब्राह्मण वर्ग का ही इस पर एकाधिकार था। ज्ञान के प्रसार प्रचार का अधिकार उन्हीं को था तथा यज्ञ एवं धार्मिक अनुष्ठान् उन्हीं के द्वारा सम्पन्न होते थे। शैक्षकीय व्यवसाय को अपनाये जाने के कारण अध्ययन अध्यापन उनके लिये आवश्यक था।

उत्तर वैदिक काल में प्रशासन, युद्ध, रक्षा तथा धनुर्वेद आदि का अध्ययन करना क्षत्रिय वर्ण का सहज एवं स्वभाविक व्यवसाय था। क्षत्रिय समाज के ज्ञानार्जन में हितार्थ सैन्य शिक्षा में प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए तक्षशिला एवं उसके परिसर में अनेक गुरूकुलों की स्थापना हुई। कालान्तर में यह संस्थायें प्रसिद्ध सैनिक प्रशिक्षण केन्द्र के रूप में विख्यात हुई। उत्तरोत्तर वैदिक काल में वैश्यों को भी वेदाध्ययन का अधिकार प्राप्त हो गया। परन्तु इस वर्ग का मूल धर्म कृषि, वाणिज्य तथा पशुपालन आदि होने के कारण वेदादि के अध्ययन की ओर विशेष ध्यान न दिया। जीवन के अन्य कार्य कलापों में वे इतने व्यस्त रहे कि उन्होंने व्यवस्था से लाभ नहीं उठाया।

चतुर्थ वर्ण शूद्रों का था। इन्हें धर्मग्रन्थों के अध्ययन का अधिकार प्राप्त नहीं था लेकिन प्रतिभावान छात्रों के लिए गुरूकुल के द्वारा खुले हुए थे। इनका मुख्य कार्य धर्म–द्विजों की पिरचर्या करना था इस कारण यह वर्ग निज गृहों में परम्परागत व्यवसायों में प्रशिक्षण प्राप्त करके जीवकोपार्जन करता था।

वैदिककालीन शिक्षा के उद्देष्य

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि इस समय की शिक्षा पूर्ण रूप से धर्म पर आधारित थी और जीवन का प्रमुख उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति था। इसके लिये वेद, धार्मिक ग्रन्थों एवं इनमें वर्णित विषयों का अध्ययन आवश्यक एवं वांछनीय था। इनके अध्ययन के लिए चारित्रिक, नैतिक एवं अध्यात्मिक गुणों की आवश्यकता होती थी।

तत्कालीन समाज यह अपेक्षा करता था कि विद्यार्थी ज्ञानोपार्जन के उपरान्त समाज के विकास में योगदान करेंगे। इस विवेचन से शिक्षा के उद्देश्य स्वतः हो जाते हैं।

यहाँ पर शोधकर्त्ता ने शिक्षा के विपुल उद्देश्यों पर निम्न रूप से प्रकाश डाला है–

(अ) मोक्ष की प्राप्ति–वैदिक काल में शिक्षा को मोक्ष प्राप्ति के एक साधन के रूप में माना गया था। *''प्राचीन समय में शिक्षा केवल शिक्षा प्राप्त करना न था। शिक्षा धर्म के लिए तथा धर्म का एक अंग थी। शिक्षा मोक्ष प्राप्त करने अथवा आत्मानुभूति का साधन थी। यही जीवन का परम लक्ष्य था।''(**राधा कुमुद मुखर्जी**)* इस प्रकार मोक्ष प्राप्ति के लिये परा एवं अपरा विद्याओं का ज्ञान अपरिहार्य था।

(ब) चारित्रिक विकास–वैदिक युगीन शिक्षा व्यवस्थान्तर्गत विद्यार्थी में चरित्र निर्माण पर सर्वाधिक बल दिया जाता था। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए छात्रों को धार्मिक तथा नैतिक उपदेश दिये जाते थे और उन्हें स्वस्थ्य वातावरण में रखा जाता था। इस समय शिक्षा गुरूओं द्वारा आश्रमों में दी जाती थी और गुरू अपने चरित्र एवं व्यवहार से अपने शिष्यों को प्रभावित करते हुये उनके चरित्र के निर्माण का प्रयास करते थे।

*''इस पद्धति काआयोजन इस प्रकार का था कि छात्र का जीवन के प्रति दृष्टिकोण व्यापक हो जाए, उसमें ज्ञान की ज्योति जगे, उसकी बुद्धि प्रखर हो और व्यक्तित्व का विकास हो। इस प्रकार के प्रयास से उसके चरित्र बल का विकास हो।''**(गोखले, बी0जी0)***

हमारे प्राचीन शिक्षाशास्त्री एवं दर्शनशास्त्री वैयक्तिक एवं सामाजिक आकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं से भली भाँति परिचित थे। उसके अनुसार ही उन्होंने पाठ्यक्रम का निर्माण किया। इस प्रकार वैदिक युगीन पाठ्यक्रम में धार्मिक विषयों के साथ ही अनेकानेक विधाओं, कलाओं तथा विशिष्ट विषयों को स्थान प्रदान किया गया था।

पाठ्यक्रम

वैदिक कालीन शिक्षा संगठन में धार्मिक पाठ्यक्रम का विशेष महत्व था। इसके प्रमुख सेतु चतुर्वेद थे। धर्म को आधार मानते हुये लौकिक विषयों का ज्ञान भी छात्रों को दिया जाता था जहाँ एक ओर छात्रों को वेद मंत्र, यज्ञ विधि, पुराण, उपनिषद् और ब्राह्मण आदि धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन कराया जाता था वहीं उन्हें इन ग्रन्थों का सही ढंग से अध्ययन करने के लिए व्याकरण, उच्चारण और छन्द शास्त्र की भी शिक्षा दी जाती थी। उन्हें मंत्रों को कंठस्थ कराया जाता था।

इस समय तक गणित, ज्योतिष, काव्य, इतिहास, दर्शन, राजनीति शास्त्र व अर्थशास्त्र, कृषि विज्ञान, आयुर्वेद, शल्य विज्ञान, सैनिक शिक्षा तथा वास्तुकला आदि विषयों को पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर लिया गया था। इस तथ्य की पुष्टि छान्दोग्य उपनिषद् के इस कहानी से होती है जिसमें स्नातन कुमार के प्रश्न के उत्तर में नारद जी कहते है–

''वे वेदों के अतिरिक्त वैदिक व्याकरण, कल्प राशि (गणित), दैव–विद्या, ब्रह्म–विद्या, भूत–विद्या, नक्षत्र–विद्या आदि अनेक विद्याओं को जानते हैं। तर्कशास्त्र को भी पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया था। इसके अतिरिक्त राशि–विद्या (अंकशास्त्र), निधि–विद्या (भूगर्भ–विद्या) एकापन (आचार शास्त्र) तथा क्षेत्र–विद्या (सैन्य विज्ञान) का भी अध्ययन होता था।''

वैदिक युगीन शिक्षा व्यवस्थान्तर्गत स्त्री शिक्षा का भी प्रावधान था। बालकों की भाँति बालिकाओं का भी संस्कार होता था और तत्पश्चात् वे ब्रह्मचारिणी के रूप में धर्मशास्त्रों का अध्ययन करती थी। वास्तव मे कन्या का वह ब्रह्मचर्य–काल उसके आगामी गृहस्थ जीवन के लिये तैयारी मात्र था।

हमारे प्राचीन शिक्षाशास्त्री एवं दर्शनशास्त्री वैयक्तिक एवं सामाजिक आकांक्षाओं, आवश्यकताओं एवं महत्वकांक्षाओं से भली भाँति परिचित थे। इसके अनुसार ही उन्होंने पाठ्यक्रम का निर्माण किया । इस प्रकार वैदिक युगीन पाठ्यक्रम बहुमुखी था। इनमें धार्मिक विषयों में साथ ही अनेकानेक विद्याओं, कलाओं या विज्ञानों तथा विशिष्ट विषयों को शामिल किया गया था।

धार्मिक विषयक पाठ्यक्रम (वेद)

आर्यो का जीवन दर्शन मूलतः मोक्ष से मन्दप्राणित था। इसके लिए याज्ञिक अनुष्ठान् आवश्यक एवं अपरिहार्य थे क्योंकि वैदिक कालीन शिक्षा संगठन में धार्मिक पाठ्यक्रम का विशेष महत्व थ। धार्मिक पाठ्यक्रमों के प्रमुख स्रोत चतुर्वेद थे। याज्ञिक कर्मकाण्डों से सम्बन्धित सिद्वान्तों एवं क्रियाओं के प्रतिपादन के लिये ऋग्वेद, यर्युवेद तथा सामवेद का अध्ययन अध्यापन आवश्यक था। ऋग्वेद तथा सामवेद आदि के अध्ययन के द्वारा ही याज्ञिक अनुष्ठान् विधिवत सम्पन्न हो पाते थे तथा मनुष्य के लिए मोक्ष मार्ग प्रशस्त होता था। वैदिक काल में इन्हें त्रयी दिशा विद्या के नाम से जाना जाता था इनके अध्ययन को स्वस्थ्य कहते थे तथा इनका अध्ययन करने वाले विद्यार्थी को क्षेत्रिय कहते थे। इनमें दक्षता प्राप्त करने के पश्चात उन्हें **त्रिषुक** की संज्ञा प्रदान की जाती थी।

वेदों के उपर्युक्त महत्व के कारण ही तत्कालीन साहित्य में इनके महात्मय का विशद् वर्णन मिलता है। वृहदारण्यक उपनिषद् के अनुसार स्वयं प्रजापति ने वेदों का प्रचार किया। श्वेताश्वर उपनिषद् के अनुसार परमात्मा ने ब्रह्म को उत्पन्न करके उसे वेदों का ज्ञान कराया। वैदिक मान्यता के अनुसार वेद अनादि और अनन्त है तथा उनका ज्ञान कई जन्मों में सम्भव नहीं है।

मोक्ष प्राप्ति के लिए तथा अलौकिक तत्वों के रहस्य को जानने के लिये वेदों का बहुत अधिक महत्व था और इसीलिए उनका अनुशीलन अत्यावश्यक था। षष्ठ्–प्राप्ति तथा अनिष्ठ–परिहार के अलौकिक उपाय का स्रोत वेद ही था। वेद की महत्ता इसी में थी कि प्रत्यक्ष अनुमान के द्वारा दुबौध तथा अज्ञेय उपाय का ज्ञान कराता था। इसका ज्ञान तार्किक शिरोमणि भी सहस्त्रों अनुमानों की सहायता से भी नहीं कर सकता। इस अलौकि उपाय को जानने का एकमात्र साधन वेद ही थे। वैदिक कालीन मान्यता के अनुसार सदगति प्राप्ति हेतु वेद–वेदांगों का अध्ययन प्रत्येक ब्राह्मण का सहज धर्म होना चाहिए। वेद शास्त्र के तत्व को जानने वाला व्यक्ति इस लोक में रहता हुआ भी ब्रह्म का साक्षात्कार करता है अतः वेदों का स्वाध्याय करना अत्यन्त आवश्यक है।

उपनिषद् ग्रन्थ वेदों में वर्णित ईश्वरीय ज्ञान की विवेचना करते हुये ब्रह्म ज्ञान का दार्शनिक विवरण प्रस्तुत करते हैं। सूत्र ग्रन्थ वैदिक ग्रन्थों में वर्णित यज्ञादि तथा विवाहोपनयनादि कर्मो का क्रमबद्ध एवं व्यवहारिक वर्णन करते है।

उद्देश्य

निम्नलिखित उद्देश्यों के आधार पर अध्ययन किया जाएगा –

- वैदिक कालीन शिक्षा दर्शन का अध्ययन करना।
- स्वामी रामदेव जी के दर्शन में निहित शिक्षा सम्बन्धी विचारों को सूत्रबद्ध करना।
- वैदिक कालीन और स्वामी रामदेव के शिक्षा दर्शन की क्रमबद्ध एवं तुलनात्मक विवचेना करना।

वर्तमान परिस्थितियों के अध्ययनों से स्पष्ट है कि वर्तमान मानव समाज विभिन्न प्रकार के प्रयोगों के दौर से गुजर रहा है। हम यह अनुभव करते हैं कि विगत् दो शताब्दियों से हमने विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में काफी प्रगति कर ली है लेकिन हमारी प्रगति की तुलना में इसके द्वारा इससे कहीं अधिक समस्यायें उत्पन्न हुई है। यह स्पष्ट तौर पर अनुभव किया जा चुका है कि व्यक्तित्व निर्माण व समाज का विकास एक दूसरे से अलग नहीं वरन् एक ही प्रक्रिया है। यही करण है आज पश्चिमी देश पुनः भारतीय योग की तरफ आकर्षित हो रहें है। स्वामी रामदेव का मत है कि समस्याओं का निराकरण तब तक नहीं हो सकता है जब तब कि हम सिर्फ यह सोचते रहें कि समस्या की जड़ दूसरे हैं न कि हम। निश्चित रूप से यदि इस विचार पर समाज का निर्माण होगा जैसा कि वह आज हो रहा है तो नींव ही गलत होगी तो समाज की दिशा व दशा का क्या कहना। यही करण है कि हमें प्रत्येक महत्व की बात को एक वैयक्तिक विकास से जोड़ना होगा। इसके लिए वैयक्तिक विकास के महत्व को समझना होगा क्योंकि समाज वस्तुतः कई शक्तियों से ही

मिलकर बना है जिसमें सबका समान महत्व है। इस प्रकार समाज में शांति और समृद्धि, प्रसन्न और अनुशासित व्यक्तियों द्वारा ही सम्भव है।

स्वामी रामदेव का मानना कि भोगवाद के अन्धे अनुकरण ने हमारे समाज का सर्वनाश कर दिया है। हम बिना जाँचे–परखे उनके रीति–रिवाज, उनके मूल्य व उनकी अवधारणायें स्वीकार करते जा रहें हैं और अपनी सांस्कृतिक मौलिकता व अपना अस्तित्व नष्ट करने जा रहे हैं। किसी भी समाज की अच्छाईयां स्वीकार करने में किसी बौद्धिक व्यक्ति को कोई आपत्ति नहीं हो सकती। हमारे वेदों में भी कहा गया है कि विश्व में कही से भी किसी से भी सद्गुणों को ग्रहण करो, लेकिन किसी समाज या संस्कृति का कूड़–कचरा भी नहीं आयात किया जाना चाहिए।

स्वामी विवेकानन्द जी का मत था कि सर्वप्रथम हमारे उपनिषदों, पुराणों एवं अन्य शास्त्रों में जो अपूर्व सत्य निहित है, उन्हें सब ग्रन्थों के पृष्ठों से बाहर लाकर, मठों की चहारदीवारियों को भेदकर, वनों की नीरवता से दूर लाकर, कुछ सम्प्रदाय विशेष के हाथों से छीनकर देश में सर्वत्र विखेर देना चाहिए ताकि ये सत्य सम्पूर्ण देश की जनता के जीवन को आलोकित करें।

स्पष्ट है स्वामी रामदेव का जीवन स्वामी विवेकानन्द के विचारों को व्यावहारिक रूप प्रदान कर रहा है। उन्होंने योग को कन्दराओं, वनों व आश्रम से निकालकर जन–जन को योग से जोड़ दिया है। चूँकि यह सिद्ध हो चुका है कि योग व्यक्ति को ऊर्जावान बनाता है। आरोग्य प्रदान करता है, उसका आत्मविश्वास बढ़ता है, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है, तथा इससे व्यक्ति की कार्यक्षमता एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है, जिससे देश व समाज के विकास की गति तीव्र होती है व बहुगुणी विकास सम्पन्न होता है। अतः योग शिक्षा को स्कूली पाठ्यक्रम में उपयुक्त स्थान देने का समय आ गया है। लेकिन सामान्यतः यह देखा गया है कि बहुत से लोग स्वस्थ शरीर के साथ दुर्बल मस्तिष्क या फिर दुर्बल शरीर के साथ स्वस्थ मस्तिष्क होते हैं जिसके चलते उनका जीवन सामान्य व सुचारू ढंग से नहीं चल पाता। इसके लिए योग, आसनों, प्राणायाम आदि के द्वारा व्यक्ति अपने स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन के लक्ष्य की प्राप्ति कर जीवन को सुखमय बना सकता है। इसके लिए योग की शिक्षा में अलग से सामान्य शिक्षा के रूप में शमिल किया जाना चाहिए न कि शारीरिक शिक्षा के रूप में एक भाग के तहत्।

योग को स्कूल में अलग से शामिल करके बच्चों को उसके लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। लेकिन प्राइमरी कक्षाओं अर्थात् 5 से 14 वर्ष तक की आयु तक बच्चों को उनकी बाल सुलभ प्रकृति के चलते योगासनों की आवश्यकता नहीं है। अतः इस स्तर पर उन्हें मात्र अष्टांग योग के दो प्रमुख अंगों यथा यम और नियमों की ही शिक्षा विभिन्न कहानियों आदि के माध्यम से दी जानी चाहिये। वर्तमान में केन्द्रीय विद्यालय में प्रचलित योग शिक्षा पर अनुसंधान की व्यापक तौर पर आवश्यकता है। जिसके आधार पर इसे सुचारू रूप से चलाया जा सके। योग को मन्त्रालय स्तर पर मान्यता देकर इसके लिए विशेष व्यवस्था का प्रावधान किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

स्वामी रामदेव का मत है कि शिक्षा वह नहीं जो स्कूलों में पढ़ायी जाये और व्यक्ति के व्यवहार में कोई परिवर्तन न लाये। बल्कि शिक्षा वह है जो व्यक्ति का जीवन रूपान्तरित कर दे, उसकी सोच बदल दे, उसकी जीवन शैली बदल दे। आज स्वामी रामदेव ने योग शिक्षा को इतना सरल, वैज्ञानिक और व्यावहारिक बनाकर समाज के सामने प्रस्तुत किया कि उसकी उपयोगिता को देखते हुये समाज ने इसे तुरन्त स्वीकार कर लिया। स्वामी रामदेव के विचारों ने इस देश में योग क्रान्ति ला दी है। लोग आहार–विहार में संयम रखने लगे हैं। पथ्य–अपथ्य का विचार करके भोजन ग्रहण करते हैं व ब्रह्म मुहुर्त की बेला में योग एवं प्राणायाम का अभ्यास करते हैं। यह बात स्वामी रामदेव की प्रभाविता, प्रमाणिकता एवं उपयोगिता सिद्ध करती

है। स्वामी रामदेव के प्रभाव से राजस्थान, बिहार, गुजरात एवं कई अन्य राज्यों ने स्कूली शिक्षा में योग को पाठ्यक्रम में स्थान दिया है।

उ०प्र० में भी शारीरिक शिक्षाा को अनिवार्य बना दिया गया है तथा शारीरिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में स्वामी रामदेव की शिक्षाओं को शामिल किया गया है।

उपरोक्त अध्ययनोपरान्त शोधकर्त्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि–

- स्वामी रामदेव के विचारों को शिक्षा के पहलु को ध्यान में रखते हुए बृहत अनुसंधान कार्य किया जाये।
- उनकी शैली एवं प्रभाव का अध्ययन किया जाये ताकि कक्षा शिक्षण को और प्रभावशाली बनाया जा सके।
- स्कूली शिक्षा के विभिन्न कक्षाओं के स्तरानुरूप स्वामी रामदेव से विचार करने के बाद योग सम्बन्धित पाठ्यक्रमों का विकास किया जाये।
- सम्पूर्ण देश के विद्यालयों में योग शिक्षा को अनिवार्य स्थान दिया जाये। योग को शिक्षा में अलग से सामान्य शिक्षा के रूप में शामिल किया जाना चाहिए न कि शारीरिक शिक्षा के रूप में एक भाग के तहत।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- कपिल,एच0 के0(2003)अनुसन्धान विधियां, व्यवहापरक विज्ञानों में हर प्रसाद भार्गव प्रकाशन,आगरा।
- कर्लिगर एफ0एन0(1969)फाउन्डेशन आफ विहेवियर रिसर्च एपलेटान काण्ट्री को0 इन्क न्यूयार्क।
- कौल, लोकेश (2004)शैक्षिक अनुसंधान की कार्य प्रणाली, विकास पब्लिशिंग हाउस लि0, नई दिल्ली।
- विश्वकर्मा वी0 पी0 (1994) ''सामान्य एवं अन्धे बालक बालिकाओं के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन'' क्षेत्रिय शिक्षा संस्थान (एन0सी0ई0आर0टी0) अजमेर द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती वि0 वि0 अजमेर को समर्पित, प्रकाशित लघुशोध प्रबन्धप्र पेज 48–89
- शर्मा, आर0ए0 (2006) शिक्षा अनुसन्धान, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ।
- वेस्ट जान डब्यू एवं जेम्स वी0कान (2003) रिसर्च इन एजूकेशन, प्रिन्टिस हाल पब्लिकेशन लि0, दिल्ली।
- वेस्ट,जे0डब्लू0(1963) रिसर्च इन एजुकेशन,नई दिल्ली प्रेंटिस हाल आफ इण्डिया प्रा0लि0।
- ओड0 एल0 के0(2004)शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
- गुड,सी वी,बार ए0 एस स्केट्स डी ई0 (1936) मेथोडोलोजी आफ एजुकेशनल रिसर्च, एपलेटान काण्ट्री को0 इन्क न्यूयार्क।
- लाल रमनबिहारी (1997) शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, रस्तौगी पब्लिकेशन, मेरठ।